संगीत शिक्षण की परम्परा एवं महत्व

शिक्षा शब्द अपने आप में बहुत व्यापक है। साधारण अर्थ में शिक्षा से तात्पर्य सीखने से लिया जाता है। भाषा शब्द कोष के अनुसार – "किसी विद्यार्थी के सीखने–सिखाने की क्रिया पढ़ाई, उपदेश, सीख।"1 आदि शिक्षा के अर्थ बताए गये हैं।

प्रसिद्ध जर्मन शिक्षा शास्त्री पेस्टालॉजी के अनुसार – "शिक्षा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का स्वाभाविक, सम्यक् और प्रगतिशील विकास है।"2

शिक्षा मानव को अनुशासन सिखाती है। आज संस्थागत शिक्षण प्रणाली में शिक्षा देने का प्रावधान सभी जगह सर्वसम्मति से किया जा रहा है। आज विद्यालयों विश्वविद्यालयों में सभी विषयों का शिक्षण दिया जा रहा है। जिस प्रकार प्रत्येक विषय के शिक्षण का महत्व व उपयोगिता है उसी प्रकार संगीत–शिक्षण का भी महत्व बढ़ गया है।

आधुनिक मनोविज्ञान ने यह स्वीकार किया है कि संगीत प्रत्येक मानव को प्रकृति की देन है। संगीत न केवल मनोरंजन करता है बल्कि संगीत–शिक्षा से बालक की जन्मजात शक्तियों का विकास सरलता व सुगमता से किया जा सकता है। संगीत सभी अनावश्यक वृत्तियों को परिष्कृत कर आध्यात्म अनुभूति की ओर प्रेरित करता है। संगीत शिक्षण वर्तमान में इसलिए अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि सभी विषय बालक को मानसिक शारीरिक रूप से थका देने वाली प्रवृत्ति के होते हैं। संगीत चूंकि एक कलात्मक विषय है। बालकों का ध्यान एकाग्र कर स्मृति, कल्पना रचनात्मक शक्तियों के विकास में सहायता प्रदान करता है।

किन्तु संगीत एक ऐसी कला है जिसे स्वयं अपनी कल्पना व सृजनात्मक शक्ति से बढ़ाया तो जा सकता है किन्तु संगीत के शुद्धतम रूप को भली भांति सीखने की आवश्यकता होती है। यह आवश्यकता आज की नहीं है, संगीत–शिक्षण की परम्परा प्राचीन काल से किसी न किसी रूप में चली आ रही है। वैदिक काल में गुरु मुख से शिक्षा दी जाती थी। मध्यकाल में घराना परम्परा द्वारा संगीत–शिक्षण का प्रचलन रहा। धीरे–धीरे घरानों का स्थान संस्थागत शिक्षा प्रणालियों ने ले लिया। इसीलिए यह कहना अतिश्योक्ति न होगी कि सभी कलाओं में प्रशिक्षण और विधिवत् शिक्षा का महत्व है परन्तु संगीत में इसका अत्यधिक महत्व है और इसी कारण से संगीतकला के कौशल के लिए गुरु की शरण लेनी ही पड़ती है। क्योंकि यह ज्ञान बिना गुरु मुखी शिक्षा से प्राप्त करना असंभव है। अन्य ललित कलाओं की तरह संगीत तथा उसके शिक्षण का भी मनुष्य जीवन में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में संगीत शिक्षा का बड़ा महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। संगीत सीखने से प्राप्त आनन्द और आत्म संतोष व्यक्ति को व्यवस्थित व संतुलित बनाए रखता है। विद्यार्थी संगीत से अपने भावों को अभिव्यक्त करके अन्यों के समक्ष अपने आपको प्रकट करते हैं। विद्यार्थी का स्वभाव तनावमुक्त हो जाता है। प्राचीन मध्यकालीन समय के अलावा आधुनिक कालीन विभूतियों ने भी शिक्षा में ललित कलाओं को महत्वपूर्ण माना है। कला एवं कला शिक्षा को समाज में बनाए रखना आवश्यक है।

जिस प्रकार सभी कार्य अर्थ (धन) से सम्पादित होते हैं ठीक उसी प्रकार सम्पूर्ण मानव जीवन संगीत से सम्बद्ध रहता है। संगीत भी जीवन को संचालित करता है। मानसिक तथा शारीरिक थकान से जब मनुष्य व्यस्त हो जाता है तो मन की उद्विगनता को शान्त कर पुनः सशक्त बनाने की क्षमता एक मात्र संगीत में ही है। संगीत की शिक्षा से ही समाज सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित बन सका है। संगीत कला मानव को दानव बनने से रोकती है। मनुष्य की पाशविक वृत्तियों को दूर कर उसे सच्चे अर्थों में अच्छा नागरिक व मनुष्य, बनाने में सहायक सिद्ध होती है। संगीत शिक्षा से नैतिकता के गुणों का रोपण तथा अनैतिकता, हीन भावना आदि की समाप्ति संभव है। इसलिए पाठ्यक्रम में संगीत का होना आवश्यक है।

संगीत शिक्षण का इतिहास देखा जाए तो प्राचीन काल से ही संगीत शिक्षा गुरु मुख से दी जाती रही है। प्राचीन कालीन संगीत शिक्षण की प्रणाली में (1) जैमनीय (2) कौथुमीय (3) राणायनीय।3 ये तीन शाखाएँ मानी जाती थी। प्राचीन काल में शिक्षा पूर्णतः गुरु द्वारा ही दी जाती थी। गुरु गृह में या आश्रम में रहकर शिक्षा प्राप्त की जाती थी। वैदिक काल में कोई निश्चित पाठ्यक्रम नहीं होता था और ना ही संगीत लिखने लिखाने का प्रावधान था क्योंकि उस समय संगीत की कोई निश्चित स्वर लिपि नहीं बनी थी।4 वैदिक काल में साम प्रशिक्षण तीन रूपों में दिया जाता था – (1) पिता पुत्र के रूप में (2) गुरु–शिष्य परम्परा के रूप में (3) गुरुकुल में जाकर शिक्षा ग्रहण करना। प्राचीन काल में संगीत शिक्षा वर्ण व्यवस्था, जीवन दर्शन तथा विशिष्ट लक्ष्य संधान से नियमित हुआ करता था। गांधर्व के सामान्य शिक्षण के लिए वैकल्पिक विषय के रूप में विद्या मंदिरों में व्यवस्था थी एवं संगीत शाला में जाकर गुरु से शिक्षा गृहण करनी पड़ती थी। प्रशिक्षण का समावेश हो जाने के कारण ही सामवेद के विशिष्ट सिद्धान्तों का अध्ययन करने के लिए अनेक साम–परिषदों की स्थापना हुई।5

पौराणिक काल में सार्वजनिक शिक्षण की व्यवस्था थी। वैदिक काल के समान ही इस काल में भी संगीत को उच्च कोटि का स्थान प्राप्त था। हरिवंश पुराण, वायुपुराण, मार्कण्य पुराण आदि में संगीत शिक्षा के प्रमाण मिलते हैं।

रामायण काल व महाभारत काल में भी संगीत शालाओं का प्रबंध शासन की ओर से किया जाता था जैसे "मत्स्यराज की राजधानी में युवतियों की नृत्य शिक्षा के लिए ऐसी ही विशाल नृत्य भवन का निर्माण किया था।"6 बौद्धकाल में संगीत शिक्षण संस्थाओं की शुरूआत बौद्ध विहारों से हुई किन्तु बाद में ये विद्या के केन्द्र बन गये। बौद्धकाल में संगीत के वैदिक व दोनों पक्षों का प्रचलन था। नालंदा विक्रमशिला, तदन्पुरी, तक्षशिला इत्यादि विश्वविद्यालयों में संगीत का स्वतंत्र विभाग था।

गुप्तकाल में कुछ जैन सूत्रों में संगीत शिक्षा का उल्लेख मिलता है। संगीत को कलाओं के अंतर्गत सुदृढ़ स्थान प्राप्त हो जाने से वह जीवन का एक अवश्य अंग तथा शिक्षा का एक प्रमुख विषय बन गया था इस समय भी गुरु–शिष्य प्रणाली ही प्रचलित थी।मध्यकाल संगीत की उन्नति का युग कहा जाता था। इस समय भी गुरु–शिष्य प्रणाली ही विद्यमान रही। मध्यकाल में संगीत–शिक्षण के अंतर्गत प्रायोगिक अथवा व्यावहारिक शिक्षण की व्यवस्था के साथ–साथ शास्त्रीय एवं सैद्धान्तिक पक्ष के ज्ञान हेतु भी व्यवस्थाऐं राजा द्वारा की जाती थी। 18वीं शताब्दी में मोहम्मद शाह के दरबार में सदारंग व अदारंग ने हजारों ख्यालों की रचना की व अनेक शिल्पकाल इस काल के प्रारम्भ में ध्रुपद शैली का प्रचार हुआ वहीं उत्तरार्द्ध में ख्याल शैली के विकास व शिक्षण का अवलोकन हुआ।7

18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मुस्लमान शासन का पतन हुआ और अंग्रेजों का आधिपत्य हो गया तब संगीत घरानों के रूप में पोषित व पल्लवित हुआ। घरानों की नींव राजपूत काल में पड़ चुकी थी किन्तु जो धीरे–धीरे विकसित हुई। घराना परम्परा में भारतीय संगीत का शिक्षण, अध्ययन व अध्यापन घरानों में ही चलता रहा। धीरे–धीरे संगीत का प्रवेश उच्च व मध्यम वर्ग के व्यक्तियों की पहुँच से दूर हो गया और संगीत का स्तर गिर गया। ऐसी परिस्थिति में अनेक अंग्रेजी शासक सर विलियम जोन्स, कैप्टन डे. बिलर्ड आदि ने भारतीय संगीत का अध्ययन कर अनेक पुस्तकें लिखीं। जिसके सकारात्मक परिणाम हुए और भारतीय शिक्षा जगत में पाठशालाओं के अन्तर्गत संगीत शिक्षण प्रारम्भ हुआ।

मौलाबख्श ने भारतीय संगीत पद्धति में परिवर्तन किया गायन शाला की स्थापना की तथा गांधर्व महाविद्यालय की स्थापना की।8

तत्पश्चात् 1901 में विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी. ने लाहौर में गांधर्व महाविद्यालय की नींव रखी। परीक्षाओं का आयोजन किया जाने लगा। लाहौर के पश्चात् बम्बई में महाविद्यालय की स्थापना हुई। इसी समय स्वर लेखन, पुस्तकें मासिक परीक्षाएं, भाषण, समारोह आदि द्वारा संगीत की शिक्षा की व्यवस्था की गई। कुछ समय बाद पं0 भातखण्डे जी ने बम्बई में गायन उत्तेजक मण्डली की स्थापना की तथा संगीत के क्रियात्मक व शास्त्र दोनों पक्षों का अध्यापन प्रारम्भ किया। भातखण्डे जी ने अपनी एक स्वरलिपी बनायी जिसने संगीत शिक्षण को एक निश्चितता, व्यवस्थित व सुविधाजनक बन सका। धीरे–धीरे अनेक विद्यालय महाविद्यालयों की स्थापना हुई जैसे – माधव संगीत विद्यालय, मैरिस कॉलेज ऑफ हिन्दुस्तानी म्यूजिक भारतीय संगीत शिक्षा पीठ, सरस्वती संगीत विद्यालय आदि।

आज संगीत रिसर्च अकादमी, संगीत शिक्षण हेतु उच्च कोटि के कार्य करती है। देश में स्वतंत्रता के बाद संगीत का खूब प्रचार–प्रसार बढ़ा। आज न केवल क्रियात्मक बल्कि सैद्धान्तिक पक्ष पर भी जोर दिया जाने लगा है। आज संगीत के पृथक विभागों की व्यवस्था, संगीत की अनेक पुस्तकें सम्मेलन, आदि आयोजित किये जाते हैं जिससे संगीत शिक्षण में गुणात्मक सुधार संभव हुआ है।

आज के संगीत शिक्षण में प्राचीन गुरु शिष्य परम्परा से अंतर अवश्य आ गया है किन्तु संस्थागत शिक्षण प्रणाली को भी यदि सरकार की पूर्ण सहायता प्राप्त हो एवं विद्यार्थी व शिक्षक पूर्ण निष्ठा से संगीत के शास्त्र व क्रियात्मक रूप की शिक्षा ग्रहण करें तो शिक्षण संस्थाओं में आयी गिरावट को दूर कर अच्छे संगीत कलाकार प्राप्त किये जा सकते हैं।

अतः निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि वैदिक काल से चली आ रही है परम्परा बहुत महत्वपूर्ण है। संगीत शिक्षण का उद्देश्य भी शिक्षा के अन्तर्गत अन्य विषयों के समान है जैसे मानव में कल्पना शक्ति का विकास, सफलत नागरिक बन सकने योग्य गुणों का विकास, स्वास्थ्य की जानकारी, व्यक्ति व समाज के दायित्वों का का निर्वाह, साहित्य, कला और प्रकृति की सराहना, प्रशंसा एवं उनका संरक्षण, स्वस्थ मनोविज्ञान, आध्यात्मिक चेतना, समय का सदुपयोग, अच्छे बुरे का ज्ञान करवाना आदि गुण है। इसी महत्व को स्वीकार करते हुए कहा जा सकता है कि संगीत शिक्षा बालक का सर्वांगीण विकास करती है इसलिए इसे शिक्षण का हिस्सा बनाए रखना अति आवश्यक है।

संदर्भ सूची

1. रामशंकर शुक्ल 'रसाल' (सम्पादक) भाषा शब्द कोष, पृ.सं. 1461.
2. कपूर तृप्त, उत्तरी भारत में संगीत शिक्षा, पृ.सं.26.
3. श्रीधर परांजपे शरद चन्द्र : भारतीय संगीत का इतिहास, पृ.100.
4. कपूर तृप्त, उत्तरी भारत में संगीत शिक्षा, पृ.34.
5. सक्सेना, मधुबाला "भारतीय संगीत शिक्षण प्रणाली एवं उसका वर्तमान स्तर, पृ.48.
6. शर्मा, डॉ. राधिका, भारतीय संगीत को मीडिया और संस्थानों का योगदान , पृ.19.
7. कपूर तृप्त, उत्तरी भारत में संगीत शिक्षा, पृ.36.
8. तृप्त कपूर, उत्तरी भारत में संगीत शिक्षा, पृ.21.
9. संगीत पात्रिका, सितम्बर, 1997.

यक्षिता वर्मा
शोधार्थी
सह निर्देशिका

प्रो. नीलम पारीक
शोधार्थी
सह निर्देशिका